

Swami Vivekanand Ka Manav Nimarnkari Shaishik Drashtikon

स्वामी विवेकानन्द का मानव निर्माणकारी शैक्षिक दृश्टिकोण

Dr. Anoj Raj [1] | Dipti Sajwan [2]

[1] Head, Department Education, Himgiri Zee Vishwa Vidyalaya, Dehradun.
[2] Research Scholar, Department Education, Himgiri Zee Vishwa Vidyalaya, Dehradun.

ABSTRACT

कहा जाता है कि स्वर्गलोक की सीधी किरणें भारतभूमि पर पदार्पण करती है इसलिये भारत भूमि सन्तों की स्थायी स्थली है। वैसे तो इतिहास से लेकर वर्तमान तक भारत मे अनेक साधु–सन्त एवं सिद्ध पुरूश हुये। परन्तु चालीस वर्श से भी कम आयु में जिस युवा–सन्यासी ने देश–विदेश में भारत के वेदान्त दर्शन की अलख जगाई, वह केवल स्वामी विवेकानन्द जी ही थे। अंग्रेजों के कूटनीतिक प्रभाव से अपनी अस्मिता से हीन हो रही भारतीय धरा पर भारतीयों को सजग, सचेश्ट तथा चैतन्य बनाने में स्वामी विवेकानन्द का अभूतपूर्व योगदान है। वास्तव में स्वामी विवेकानन्द आधुनिक मानव के आदर्श प्रतिनिधि हैं। उनके द्वारा दिये गये मानव–निर्माण सम्बन्धी विचार आधुनिक समय में भी प्रेरणादायी बने हुये हैं। स्वामी जी कालजयी महापुरूश हैं और कालजयी महापुरूशों के विचार कभी पुराने नही होते हैं, बल्कि सतत प्रासंगिक बने रहते हैं। स्वामी जी के शिक्षा दर्शन का लक्ष्य मानव–निर्माण था। शिक्षा को वे इस लक्ष्य की प्राप्ति का सशक्त माध्यम मानते थे। मानव को पूर्णता प्रदान करने हेतु शिक्षा का स्वरूप कैसा हो ? प्राचीन शिक्षा कितनी उपयोगी हो सकती है। अंग्रेजो द्वारा स्थापित शिक्षा हमारे उद्देश्यों की पूर्ति हेतु कितनी समर्थ है ? मूल्यों पर आधारित शिक्षा का स्वरूप कैसा हो ? इन समस्त प्रश्नों पर स्वामी विवेकानन्द जी के ओजस्वी व क्रान्तिकारी विचारों को जानना ही प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य है।

शब्द कुन्जीः स्वामी विवेकानन्द, शिक्षा दर्शन एवं मानव–निर्माण सम्बन्धी विचार।

i¼Lrkouk

देश की राजनीतिक चेतना के साथ–साथ सांस्कृतिक तथा धार्मिक भावनाओं के विकास में अपना योगदान देने वाले महापुरूशों में स्वामी विवेकानन्द का नाम विशेश रूप से स्मरणीय है। महर्शि विवेकानन्द ने जनता को अनुद्योग, आलस्य, अकर्मण्यता के स्थान पर उद्योग, परिश्रम और कर्मण्यता का पाठ पढ़ाया, धार्मिक कृत्यों में प्राचीन विचारधारा के स्थान पर तथा आडम्बरपूर्ण अर्चना के स्थान पर नवीन मानसिक पूजा को महत्व दिया। रूढ़िवाद की पुरातन छिन्न–भिन्न श्रृंखलाओं को नश्ट करके जनता को धर्म के मूल तत्वों को समझाया। अमूल्य रत्नों से परिपूर्ण जाज्वल्यमान भारत वसुन्धरा का अंचल कितना पवित्र, कितना सौभाग्यशाली और कितना अनोखा है यह किसी से छिपा नही है। यह रत्नगर्भा भारत भूमि अपने अन्तर में जहाँ असंख्य–मणि–मुक्ताएं छिपाये बैठी है वही उसके अंचल में समय–समय पर ऐसे नवरत्न पैदा हुये है जिनकी जीवन–ज्योति से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड जगमगा उठा, जिन्होने चट्टान बनकर समय का प्रवाह रोक दिया, जो अपने लिये नही वरन् विश्व के लिये जिए और जिनके पवित्र तेज के समक्ष समस्त अमानवीय एवं अपावन विचारों ने घुटने टेक दिये। ऐसे विलक्षण महापुरूश भारत में एक दो नहीं है बल्कि इनकी एक विशाल मलिका है। इस दिव्य मलिका के एक ज्योतिर्मान रत्न है स्वामी विवेकानन्द जी।

स्वामी विवेकानन्द (1863–1902) ने जनमानस को जागृत करने हेतु 'उठिये, जागिये और श्रेश्ठ लक्ष्य को प्राप्त करिये' का उद्घोश किया। समाज की रूढ़िगत कुरीतियों से दिन प्रतिदिन अधोगति को प्राप्त हो रही जनता को अपनी भौतिक एंव सांस्कृतिक दशा का ज्ञान कराते हुये निर्भीक होकर अपने कर्तव्य पथ पर चल पड़ने का मार्ग दिखाने वाले स्वामी विवेकानन्द ने हिन्दू धर्म के उदात्त एवं प्रगतिशील विचारों को प्रचारित कर भारत की कीर्ति–पताका को विश्व व्योम में फहराया। भगवान बुद्ध, शंकराचार्य, तुलसी, कबीर इत्यादि द्वारा कृत कार्यो के अनुरूप आगे बढ़ते हुये स्वामी विवेकानन्द भारत वासियों के ह्नदय सम्राट के रूप में प्रकट हुये।

कलकत्ता के एक क्षत्रिय परिवार में सन् 1963 में विश्वनाथ दत्त व भुवनेश्वरी देवी के सम्भ्रान्त परिवार में स्वामी विवेकानन्द का जन्म हुआ। स्वामी जी बाल्यकाल से ही कुशाग्र बुद्धि, स्वस्थ शरीर, सुन्दर काया, अद्‌भुत तर्कक्षमता व वैचारिक प्रखरता के धनी थे।

सन् 1893 में अमेरिका के शिकागों नगर में सर्वधर्म सभा को संबोधित करने का अवसर प्राप्त हुआ जहाँ उन्होंने वेदान्त दर्शन पर अपने अनूभूतपूर्व व्याख्यान के द्वारा विश्व के नागरिकों के मध्य प्रेम और एकता का बीजारोपण किया। स्वामी जी का व्याख्यान सुनकर अमेरिकी और पाश्चात्य लोग मंत्रमुग्ध हो गये। हिन्दू संस्कृति का वास्तविक स्वरूप विश्व जनमानस के समक्ष प्रस्तुत करना स्वामी जी की प्रमुख विशेशता थी। आलौकिक प्रतिभा के धनी स्वामी विवेकानन्द ने 39 वर्श की अल्पायु में ही 4 जुलाई 1902 को निर्वाण प्राप्त किया। प०जवाहरलाल के शब्दों में "विवेकानन्द प्राचीन और वर्तमान भारत की संस्कृति के बीच की ऐसी कड़ी थे, जिनका उद्देश्य सामाजिक सेवा, जन शिक्षा, धार्मिक जाग्रति तथा शैक्षिक सामाजिक संचेतना के माध्यम से मानवता की सेवा करना था।"

शिक्षा दर्शन

स्वामी विवेकानन्द जी शिक्षा को व्यापक अर्थ में लेते हुये कहते थे "कुछ परीक्षायें पास कर लेना तथा अच्छे भाशण दे देना ही शिक्षा नहीं, इसमें जीवन संघर्श करने के लिये तैयारी, चरित्र निर्माण, समाज सेवा की भावना, शेर जैसा साहस उत्पन्न करना नीहित है।" स्वामी जी पुस्तकीय ज्ञान का विरोध करते थे तथा उस शिक्षा का समर्थन करते थे जो व्यक्ति को सबलता प्रदान करे व उसे अपने पैरों में खड़े होने की सामर्थ्य प्रदान करे। स्वामी जी कहते है "आज की यह उच्च शिक्षा रहे या बन्द हो जाये, इससे क्या बनता बिगड़ता है। यह अधिक अच्छा होगा, यदि लोगों को थोड़ी तकनीकी शिक्षा मिल सके, जिससे वे नौकरी की खोज में इधर–उधर भटकने के बदले किसी काम में लग सके और जीविकोपार्जन कर सकें।"

स्वामी जी के शिक्षा दर्शन में निम्न बिन्दुओं को स्थान दिया गया है–

- शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक व नैतिक पक्ष पर बल देते हुये मन, वचन और कर्म की शुद्धि द्वारा ही आत्म–नियंत्रण सम्भव है।
- पुस्तकीय ज्ञान शिक्षा नही है।
- संघर्श शक्ति और स्वावलम्बन को शिक्षा प्रक्रिया में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।
- आचार–विचार और संस्कारों द्वारा दी गई शिक्षा धर्मग्रन्थों के उपदेशों से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है।
- जन–मानस में शिक्षा के माध्य से चेतना उत्पन्न करना जिससे राश्ट्र विकसित हो।
- देश की प्रगति हेतु तकनीकी एवं वैज्ञानिक शिक्षा आवश्यक।
- बालक के भौतिक व आध्यात्मिक विकास हेतु उत्तम पाठ्यक्रम का निर्माण।
- बालक की शक्तियों में विश्वास करना व अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना।
- शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु छात्र व शिक्षक के मध्य सहानुभूतिपूर्ण सम्बन्धों का स्थापन।

स्वामी जी वर्तमान शिक्षा प्रणाली के आलोचक और व्यवहारिक शिक्षा के प्रबल समर्थक थे। उनका कहना था "कोई किसी को नही सिखाता प्रत्येक मनुश्य अपने आप सीखता है। बाहरी शिक्षक तो केवल सुझाव देता है जिससे भीतरी शिक्षक समझने और सीखने की ओर प्रेरित होता है। आप बालक को शिक्षा देने में उसी प्रकार असमर्थ हैं जैसे किसी पौधे को बढ़ाने में। बालक अपने आपको शिक्षित करता है आप केवल उसकी प्रकृति अनुसार सहायता करते है।"

शिक्षा का अर्थ

स्वामी विवेकानन्द सूचनाओं के संग्रह मात्र को शिक्षा नही मानते है। मात्र कुछ डिग्री प्राप्त कर लेने को वे अनुपयुक्त मानते है। उनके शब्दों में "यदि तुम केवल पाँच ही परखे हुये विचारों को आत्मसात कर लेते हो और उनके अनुसार अपने जीवन और चरित्र का निर्माण कर लेते हो तो तुम एक पूरे ग्रंथालय को कंठस्थ करने वाले की अपेक्षा अधिक शिक्षित हो। यदि शिक्षा से तात्पर्य जानकारियों का ढ़ेर होता तो पुस्तकालय संसार के सबसे बड़े सन्त हो जाते और विश्वकोश ही महान ऋशि बन जाते।"

स्वामी जी का मानना है कि व्यक्ति में ज्ञान स्वतः निहित है। ज्ञान कभी उत्पन्न नहीं किया जा सकता उसका केवल अविश्कार किया जा सकता है, और जो कोई व्यक्ति कोई बड़ा अविश्कार करते है, उन्ही को प्रेरित पुरूश कहा जा सकता है। यदि वे केवल आध्यात्मिक सत्य का अविश्कार करते है, तो हम उन्हे पैगम्बर या ऋशि कहते है, और जब वह अविश्कार जड़ जगत् सम्बन्धी कोई सत्य होता है, तो उन्हे हम वैज्ञानिक कहते है।

स्वामी जी के अनुसार शिक्षा द्वारा मनुश्य का निर्माण किया जाता हैं। समस्त अध्ययनों का अन्तिम लक्ष्य मनुश्य का विकास करना है। इसलिये जिस अध्ययन द्वारा मनुश्य की कल्पना शक्ति का प्रवाह संयमित होकर प्रभावोत्पादक बन सके, उसी का नाम शिक्षा है। विवेकानन्द ने ऐसी शिक्षा प्रणाली पर बल दिया जो निहित क्षमताओं के विकास के साथ–साथ व्यक्ति को जीविकोपार्जन में सहायता करे तथा जीवन–संघर्श हेतु तैयार करें।

पाठ्यक्रम लौकिक पाठ्यक्रमआध्यात्मिक पाठ्यक्रमभाशा, विज्ञान, मनोविज्ञान, राजनीति विज्ञान, गृह विज्ञान, तकनीकी शास्त्र, उद्योग कौशल, कला, कृशि व व्यवसाय, इतिहास, भूगोल, गणित,

खेलकूद, व्यवसाय।धर्म एवं दर्शन, पुराण, उपदेश श्रवण, कीर्तन, गीत व भजन, साधु संगत।स्वामी जी मानते हैं कि मनुश्य एक सामाजिक प्राणी है। इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में वह एक असहाय मूक प्राणी के रूप में जन्म लेता है, तथा विभिन्न विशयों के ज्ञान के द्वारा ही वह अपने को परिश्कृत करता है। उनकी मान्यता थी कि पाठ्यक्रम निर्माण का आधार धर्म व मूल्य होना चाहिये चूँकि वह मनुश्य को पूर्ण बनाने में सहयोग देते हैं, परन्तु वे पाठ्यक्रम में लौकिक विशयों को सम्मिलित करने का समर्थन भी करते हैं। स्वामी जी ने वैदिक शिक्षा का अर्थ "सा विद्या या विमुक्तये" व आधुनिक शिक्षा का परिवर्तित अर्थ "सा विद्या या नियुक्तये" का सम्मिश्रण अपने पाठ्यक्रम में आध्यात्मिक व लौकिक विशयों के माध्यम से निम्नवत् प्रस्तुत किया है–

लौकिक पाठ्यक्रम	*आध्यात्मिक पाठ्यक्रम*
भाशा, विज्ञान, मनोविज्ञान, राजनीति विज्ञान, गृह विज्ञान, तकनीकी भास्त्र, उद्योग कौ ाल, कला, कृशि व व्यवसाय, इतिहास, भूगोल, गणित, खेलकूद, व्यवसाय।	धर्म एवं द र्न, पुराण, उपदे ा श्रवण, कीर्तन, गीत व भजन, साधु संगत।

स्वामी विवेकानन्द का मानना था कि उपर्युक्त समस्त विशय मानव को पूर्णता प्रदान करते हैं। यदि शिक्षा के पाठ्यक्रम में लौकिक विशयों को सम्मिलित किया जाये तो वह मानव का आर्थिक अथवा भौतिक विकास करने हेतु उपयोगी है और यदि आध्यात्मिक विशयों को सम्मिलित किया जाये तो वे मानव को नैतिक बल प्रदान करेंगे। जिससे की उनके आत्मबल में वृद्धि होगी। लौकिक और आध्यात्मिक पाठ्यक्रम के द्वारा ही बालक पूर्णता को प्राप्त कर सकता है।

शिक्षण विधि

स्वामी विवेकानन्द प्रचलित शिक्षण विधियों से सहमत नही थे। स्वामी जी की विचारधारा है कि सर्वश्रेश्ठ पद्धति ध्यान की एकाग्रता है क्योंकि इसके अभाव में किसी भी प्रकार के ज्ञान की प्राप्ति नही हो सकती है। स्वामी जी ने जिन शिक्षण विधियों पर विशेश बल दिया वह निम्नवत है–

(i) धर्म या योग विधि
(ii) केन्द्रीयकरण विधि
(iii) उपदेश विधि
(iv) अनुकरण विधि
(v) निर्देशन परामर्श विधि
(vi) क्रियात्मक एवं व्यवहारिक विधि

स्वामी जी धर्म या योग विधि का समर्थन करते थे क्योंकि उनका मानना था कि योग मन की शक्तियों को नियन्त्रित व एकीकृत करती है। केन्द्रीयकरण विधि के द्वारा बालक के मन को एकाग्र व केन्द्रित करना पड़ता है, जिससे उसकी चंचलता दूर हो जाये। स्वामी जी का मानना था कि यदि मुझे अध्ययन के अवसर प्राप्त हो तो मैं तथ्यों का अध्ययन न करूं। मै तो ध्यान करने की शक्ति और निस्पृहता का विकास करूंगा व पूर्ण साधना के द्वारा अपनी इच्छानुसार तथ्यों का संग्रह करूंगा। स्वामी जी उपदेश की विधि का अर्थ गुरू गृहवास बताते हैं। वे मानते हैं कि 25 वर्श की अवस्था तक छात्रों को गुरूगृहवास मे निवास करना चाहिये व विचार–विमर्श, तर्क–वितर्क, शंका का समाधान जैसी अनेक युक्तियां सीखनी चाहिये। उन्होंने सेमिनार और ट्यूटोरियल कक्षाओं पर विशेश रूप से बल दिया और अनुकरण विधि में शिक्षक को आदर्श का प्रतीक माना है जिसके द्वारा छात्र का चरित्र गठन हो सके। स्वामी जी का व्यक्तिगत निर्देशन या परामर्श शिक्षा की पूर्णता व व्यक्तित्व की पूर्णता की अनुभूति के लिये था। वह क्रियात्मक या व्यवहारिक विधियों के अन्तर्गत साधु संगति भ्रमण, सेवा–कार्य, खेल–कूद, शारीरिक शिक्षा, उद्योग, शिल्प एवं कौशलों के ऊपर बल देते थे। स्वामी विवेकानन्द ने स्वाभाविक रूप से सीखने के सिद्धान्त, स्वानुभव द्वारा सीखने तथा कर्म से ज्ञान की ओर अग्रसरित होने के सिद्धान्तों को मान्यता प्रदान की।

शिक्षक

स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षक के गुणों का वर्णन करते हुये कहा है कि अध्यापक संयमी व आत्मज्ञानी होना चाहिये। उसे धर्मग्रन्थों के सारतत्व की जानकारी होनी चाहिये। शिक्षक को निश्पाप होना चाहिये। स्वंय सत्य का ज्ञान प्राप्त कर और दूसरों को उसकी शिक्षा देने के लिये आवश्यक है कि वह ह्रदय से पवित्र हो जिससे उसके शब्दों का मूल्य बना रहे। उसे किसी स्वार्थवश धन के लिये या प्रसिद्धि के लिये अपने विद्यार्थी को शिक्षित नही करना चाहिये। बल्कि उसका भाव तो मानव–प्रेम होना चाहिये। अध्यापक को अपने विद्यार्थी के प्रति सहानुभूति रखनी चाहिये तथा बालक की प्रवृत्तियों की जानकारी होनी चाहिये। विद्यार्थी की उत्तम् वृत्तियों को सदैव प्रोत्साहित करना चाहिये। एक सच्चा शिक्षक वही है जो कुछ समय में अपने को हजारों व्यक्तियों में परिणित कर सकें। शिक्षक को सच्चे सलाहकार की भूमिका अदा करनी चाहियें। "गुरूमुखि नांद गुरूमुखि वेद" ध्यान से जो ज्ञान प्राप्त होता है उसे 'नाद' तथा शास्त्रों के ज्ञान को 'वेद' कहते है। नाद तथा वेद का ज्ञान गुरू मुख से ही प्राप्त होना चाहियें।

शिक्षार्थी

स्वामी जी फ्रोबेल की भाँति बालक को शिक्षा का केन्द्र बिन्दु मानते थे। वे कहते थे कि बालक में आन्तरिक दिव्यता पायी जाती है व बालक लौकिक व आध्यात्मिक ज्ञान का भण्डार होता है। स्वामी जी बालक की उपमा एक पौधे से देते हुये कहते हैं कि जिस प्रकार बरगद के बीज मे विकास करके एक बड़ा वृक्ष बनाने की शक्ति विद्यमान रहती है उसी प्रकार बालक के जीवन तत्व में बुद्धि निवास करती है। पौधे के प्राकृतिक विकास की भाँति ही शिक्षार्थी का भी अपनी प्रवृत्ति की भाँति विकास होता है।

स्वामी जी का मानना था कि बालक ब्रह्मचर्य का पालन करें। जब तक शिक्षार्थी इन्द्रिय निग्रह नही करते, उनमे सीखने के लिये प्रबल इच्छा उत्पन्न नही होती है और वे गुरू में श्रद्धा रखकर सत्य को जानने का प्रयत्न नही करते तब तक वे न भौतिक ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं और न आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

विद्यालय

स्वामी जी गुरू गृह प्रणाली के समर्थक थे। परन्तु आधुनिक परिप्रेक्ष्य मे वे यह जानते थे कि अब गुरू गृह जन कोलाहल से दूर कहीं प्रकृति की सुरम्य गोद में स्थापित नही किये जा सकते इसलिये वे इस बात पर बल देते थे कि विद्यालयों का पर्यावरण शुद्ध हो और वहाँ व्यायाम, खेल–कूद, अध्ययन–अध्यापन और इन सबके साथ–साथ समाज सेवा भजन–कीर्तन एवं ध्यान की क्रियाएं भी सम्पादित हो। स्वामी जी ने विद्यालय को मठ के साथ जोड़ा है।

अनुशासन

मनुश्य जीवन के मुख्य रूप से तीन पक्ष होते हैं– प्राकृतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक। स्वामी जी इन तीनों पक्षों को महत्व देते थे, परन्तु सर्वाधिक महत्व आध्यात्मिक पक्ष को देते थे। स्वामी जी अनुशासन का अर्थ अपने व्यवहार में आत्मा द्वारा निर्दिश्ट होना मानते थे। वे कहते थे कि जब मानव अपने प्राकृतिक 'स्व' से प्रेरित होकर कार्य करता है तो हम उसे अनुशासित नही कह सकते हैं, जब वह अपने प्राकृतिक 'स्व' पर संयम रखकर सामाजिक 'स्व' से प्रेरित होता है तो हम उसे अनुशासित कह सकते हैं। परन्तु वास्तव में अनुशासित वह है जो आत्मा से प्रेरित होता है। स्वामी का मानना था कि यदि शिक्षक शिक्षार्थियों के सामने आत्मानुशासन का उच्च आदर्श प्रस्तुत करेंगे और फिर धीरे–धीरे वैसा सोचने और करने की विद्यार्थियों को अन्दर से प्रेरणा मिलने लगेगी व वे आत्मानुशासन की ओर बढ़ेंगे।

मानव निर्माण की शिक्षा

स्वामीजी द्वारा दिये गये उपदेश, उनके विचार सौ वर्श के बाद आज भी भारत के लिये प्रेरणा है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार "शिक्षा का अर्थ है उस पूर्णता को व्यक्त करना है जो सब मनुश्यों में पहले से ही विद्यमान है।" वे कहते थे "मै ऐसा धर्म चाहता हूँ जो हर व्यक्ति को अन्न, वस्त्र और शिक्षा के साथ–साथ उन्हे अपने सभी दुःख दूर करने की शक्ति प्रदान करे। हम भारतीय पहले है, मराठा, गुजराती, बंगाली, मद्रासी बाद में। सबको मिलाकर इस देश की दरिद्रता और अज्ञानता को दूर करना है।"

स्वामीजी के अनुसार "हमारा लक्ष्य यही है कि हमारे देश की सम्पूर्ण शिक्षा, लौकिक और पारमार्थिक, हमारे हाथों में हो और यह शिक्षा राश्ट्रीय आवश्यकताओ के अनुरूप हो और जहाँ तक सम्भव हो सके शिक्षा राश्ट्रीय पद्धति से ही दी जानी चाहिये।"

स्वामी विवेकानन्द मानव में ईश्वर पूर्णता पहले से ही विद्यमान मानते है। उनके अनुसार मनुश्य लौकिक और पारलौकिक ज्ञान का पुंज है।

मानव–निर्माण की शिक्षा के उद्देश्य

स्वामी विवेकानन्द की शिक्षा का आदर्श है– पूर्ण मानव का निर्माण। "शिक्षा मानव में निहित पूर्णता का प्रकाशन है।" इसी पूर्णता के हेतु वे सतत् प्रयत्नशील रहे। उनका विचार था कि घाव या तृण से लेकर मानव तक में ईश्वर की शक्ति विद्यमान है। शिक्षा द्वारा मानव में अनंत शक्ति, धैर्य, उत्साह एवं साहस उत्पन्न करके इस पूर्णता की प्राप्ति करनी चाहिये। इस प्रकार शिक्षा का मूल लक्ष्य है– मानव में ईश्वर की उपस्थिति की अनुभूति कराना। इस अभीश्ट की पूर्ति हेतु स्वामी जी ने शिक्षा के उद्देश्य निम्नवत् प्रस्तुत किये–

1. शारीरिक विकास

स्वामी विवेकानन्द जी ने उपनिशदों के बलिश्ठ बनने के उद्देश्य को स्वीकार करके आजीवन व्यायाम, खेल एवं योगाभ्यास के माध्यम से उसे अपने जीवन में उतारा था। वे अपने विद्यार्थियों एवं भावी नागरिकों को भी स्वस्थ शरीर, प्रसन्नचित्त व चेतना से युक्त देखना चाहते थे। यही कारण है कि उन्होने शारीरिक विकास को शिक्षा का प्रथम उद्देश्य माना था। स्वामी जी का विचार था कि संसार में कोई पाप है तो वह है दुर्बलता। अतः दुर्बलता का परित्याग कर सबल बनों। वर्तमान में ऐसे बलिश्ठ मनुश्यों की आवश्यकता है जिसकी पेशियाँ दृढ़ एवं स्नायु फौलाद की तरह दृढ़ हो।"

2. समाजिक और सांस्कृतिक विकास

व्यक्ति के व्यक्तिगत व सामाजिक विकास पर बल देते हुये स्वामी जी कहते है कि हम दुर्बल है, इसीलिये त्रुटि करते है और हमारी दुर्बलता का कारण हमारा अज्ञान हैं। हमें अज्ञानी कोई नही बनाता, हम स्वंय अज्ञान के कारण है। मानव का आत्मिक विकास ही वैयक्तिक विकास है। परन्तु मानव का वैयक्तिक विकास तब तक सम्भव नही है जब तक की मानव का सामाजिक विकास न हो। शिक्षा मे सांस्कृतिक विकास के उद्देश्य को वे महत्वपूर्ण मानते है, किन्तु पाश्चात्य विचारकों की भाँति वे संस्कृति को बौद्धिक कार्य की उपज नही मानते थे। उसे तो वे आत्मा का गुण बताते है, जो मानव व्यवहार में व्यापत रहता है।

3. चरित्र निर्माण

स्वामी विवेकानन्द चरित्र निर्माण को शिक्षा का सर्वश्रेश्ठ उद्देश्य मानते थे। उनका विश्वास था कि मानव विचारों का चरित्र से धनिश्ठतम सम्बन्ध होता है। व्यक्ति का जैसा विचार होता है वैसा ही चरित्र भी। अतः उत्तम विचारों के सृजन हेतु उन्होंने चरित्र–निर्माण के उद्देश्य को आवश्यक बताया है। इस उद्देश्य के द्वारा संकल्प शक्ति विकसित होती है।

4. जीविकोपार्जन

स्वामीजी के अनुसार शिक्षा वह है जो मानव को जीवनोपयोगी तथा आत्म–निर्भर बनाने में सक्षम हो। इसीलिए उन्होंने छात्रों की प्राथमिक आश्यकताओं की पूर्ति हेतु जीविकोपार्जन को शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य माना था। वे विद्यार्थियों में कृशि, उद्योग, तकनीकी ज्ञान एवं व्यावसायिक शिक्षा के माध्यम से इतनी सामर्थ्य उत्पन्न करना चाहते थे ताकि वे आत्मनिर्भर हो सकें।

5. धार्मिक शिक्षा

स्वामीजी धर्म को मानव की आन्तरिक निधि मानते थे। अतः उन्होंने धार्मिक शिक्षा को शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य माना है। धार्मिक शिक्षा द्वारा वे व्यक्ति में आत्म–विश्वास, आत्म–श्रद्धा, आत्म–नियंत्रण, आत्म–निर्भरता, आत्म–योग, मानवता, सहयोग एवं प्रेम तथा विश्व–बन्धुत्व की भावना का विकास करके दिव्य मानव का सृजन करना चाहते थे।

6. विश्व–बन्धुत्व की भावना का विकास

स्वामी विवेकानन्द जी 'वसुधैव कुटुम्बकम' में विश्वास करते थे। इस भावना का विकास वे विश्व–बन्धुत्व प्रदायी शिक्षा द्वारा करना चाहते थे। उनका विश्वास था कि इसी भावना के द्वारा छात्रों के मनस में ये भाव जागृत किये जा सकते है कि चींटी से लेकर मानव तक सभी में एक सी

आत्मा विद्यमान है। विश्व के सभी जीव एक ही ईश्वर की सन्तान है। सबमें एक ही परम–शक्ति है और सभी उसी दिव्य शक्ति से प्रकाशित है। स्वामी जी के अनुसार, "हृदय ही मनुश्य को उच्च बनाता है। अतः शिक्षा द्वारा हृदय को जागृत करो तभी ब्रह्म की अनुमति होगी।" हृदय पक्ष की शिक्षा वास्तव में विश्व–बन्धुत्व की शिक्षा के उद्देश्य द्वारा ही सम्भव है।

निश्कर्शतः

विवेकानन्द जी ने वास्तविक जीवन के परिप्रेक्ष्य में लौकिक और पारलौकिक मूल्यों के बीच सुदृढ़ सेतु बनाया है। भारतीय सांस्कृतिक धरोहर को आधार मानते हुये शिक्षण की दृश्टि से एकाग्रता तथा चित्त वृत्ति निरोध को जीवन में उतारने का सन्देश दिया। स्वामी का मानव निर्माणकारी शिक्षा दर्शन शिक्षा की व्यापक एवं आधुनिक परिभाशा प्रस्तुत करता है, मानव की आध्यात्मिक व्याख्या करता है तथा भारतीय एवं पाश्चात्य वेदान्त एवं विज्ञान का समन्वयवादी दृश्टिकोण जन समूह के समक्ष प्रस्तुत करता है। स्वामीजी के विचार वर्तमान पीढ़ी हेतु आज और भी उपयोगी प्रतीत होते है क्योंकि पाश्चात्य वैचारिकी का प्रभुत्व बढ़ रहा है तथा युवक और युवतियों के लिये एक तरफ जीविका का दबाव बढ़ रहा है तो दूसरी तरफ प्राचीन आध्यात्मिक मूल्य तेजी से वाश्पित भी हो रहे है। इन विशम स्थितियों में स्वामी विवेकानन्द का समन्वयवादी दर्शन नई पीढ़ी में आशा एवं उत्साह का संचार करने में सक्षम है।

सन्दर्भ सूची

1. लाल, आर०बी० और तोमर, जी०सी० (2004), विश्व के श्रेश्ठ शैक्षिक चिंतक, मेरठ : आर०लाल० बुक डिपो, पृ.301।
2. पाण्डेय, आर० (2008), विश्व के श्रेश्ठ शिक्षा शास्त्री, अगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन, पृ.291।
3. पाण्डेय, डॉ०आर० और कपूर, डॉ०बी० (2008), शिक्षा के दार्शनिक आधार, आगरा : विनोद पुस्तक मन्दिर, पृ.159।
4. संह, एन०पी० (2009), शिक्षा के दार्शनिक आधार, मेरठ : आर०लाल बुक डिपो, पृ.244।
5. सिंह, डॉ०आर० और सिंह, यू० (2010), शिक्षा तथा उदीयमान भारतीय समाज, आगरा : श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, पृ.126।
6. सक्सेना, डॉ०एस० (नवीन संस्करण), शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार, आगरा : साहित्य प्रकाशन, पृ.60।
7. शर्मा, ओ०पी० (2008), शिक्षा के दार्शनिक आधार, आगरा : विनोद पुस्तक मन्दिर, पृ.163।
8. वर्मा, जी०एस० (2005), उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, मेरठ : आर लाल बुक डिपो, पृ. 208, 209, 294।